Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

लर्निंग कर्व

हिन्दी अंक 6 : दिसम्बर, 2013

विशेष अंक

कला

स्कूल शिक्षा में

अन्दर : व्यापक परिदृश्य, परिप्रेक्ष्य तथा व्यक्तिगत अनुभव

सम्पादन
अनन्दा एच. एन.
चन्द्रिका मुरलीधर
मधुमिता सुधाकर
नीरजा राघवन
प्रेमा रघुनाथ

सलाहकार
हृदय कान्त दीवान
एस. गिरिधर
रामगोपाल वल्लत

हिन्दी अनुवाद
रमणीक मोहन
नलिनी रावल
निरूपा भटनागर

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

डिजायन एवं मुद्रक
एससीपीएल डिजायन
बंगलौर - 560 062
+91 80 2686 0585
+91 98450 42233
www.scpl.net

कृपया ध्यान दें :
इस अंक में प्रकाशित लेख मूलतः लर्निंग कर्व (अँग्रेजी) XVIII, सितम्बर 2012 के लेखों का हिन्दी अनुवाद हैं। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

लर्निंग कर्व अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक–अध्यापकों, स्कूल प्रमुख, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर–सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोजमर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।

सम्पादक की बात

सर्वप्रथम मैं लर्निंग कर्व की नए सम्पादक के रूप में इस अंक के पाठकों को नमस्कार कहना चाहती हूँ। मैं 30वर्षों से अधिक तक स्कूल में शिक्षिका के रूप में काम कर चुकी हूँ। स्कूल के क्रियाकलापों के दो रूप हैं और मुझे लगता है कि मैं उन दोनों रूपों से परिचित हूँ–पहला साक्षरता और शिक्षा मुहैया कराना और दूसरा एक सामाजिक स्थान के रूप में। लेकिन एक ऐसी पत्रिका का सम्पादन करना जो बेहद चेतन व प्रबुद्ध हाथों में जाती है, मेरे लिए एकदम नया अनुभव है। मैं इसका बड़े उत्साह और आशा के साथ स्वागत करती हूँ।

लर्निंग कर्व का यह अंक हम कला के विभिन्न रूपों पर प्रस्तुत कर रहे हैं। कला हमारे चारों ओर बिखरी हुई है। भारतीय जीवन में तो कला–कौशल हर क्षेत्र में व्याप्त है, जिसकी शुरुआत सुबह–सवेरे घर के सामने सुन्दर आकृतियाँ बनाने से होती है जिन्हें हम अल्पना, रंगोली या कोलम कहते हैं। यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि इस जटिल चित्रकारी में न केवल सधे हुए हाथों और कलात्मक दृष्टि की आवश्यकता होती है वरन वे बेहद गणितीय भी होते हैं। हमारे देश के घर, खासतौर पर ग्रामीण व अर्ध शहरी क्षेत्रों के घर, सहज रूप से ही डिजाइनर घर होते हैं। हमारे साधारण से लोटे की बनावट कितनी उत्कृष्ट होती है, जो सभी आकारों में उपलब्ध है और जिसका उपयोग हमारे घर में सर्वत्र होता है–यह डिजाइनिंग की निपुणता का अचम्भा ही तो है!

हमारी दीवारों पर तरह–तरह के मनुष्यों, पशुओं व पक्षियों की आकृतियों और पेड़–पौधों के चित्रों से सजावट की जाती है। किसी भी गाँव में चार कदम टहलने निकल जाएँ तो ऐसे घर और मन्दिर देखने को मिलते हैं जिनकी सुन्दरता अद्वितीय होती है। हमारे देश में नृत्य, संगीत, शिल्पकला, कठपुतली निर्माण, लकड़ी के काम की कला के भी कई रूप मिलते हैं।

ऐसी असाधारण कला से घिरे होने के कारण हम शायद उन्हें आसानी से नजर अन्दाज कर देते हैं और रोजमर्रा के जीवन के अन्य महत्त्वपूर्ण पहलुओं से बँधकर रह जाते हैं। इतना ही नहीं ये पहलू हमसे इतनी ज्यादा माँग करने लगते हैं कि हम इनमें डूबकर अपनी विरासत को भूल से जाते हैं और हमें उनकी याद दिलानी पड़ती है। यह भी याद दिलाना पड़ता है कि जब हम किसी भी कला को सीखते हैं या उसका अभ्यास करते हैं तो उससे हमारा कितना भला होता है। पहले स्थिति यह थी कि कला के किसी न किसी रूप को औपचारिक तरीके से नहीं तो अपने आप ही सीख लिया जाता था क्योंकि उन दिनों घर स्वयं कला के भण्डार हुआ करते थे। एकल या समूह गायन, नृत्य आदि हर दिन के अधिगम का हिस्सा थे। स्कूल भी कला की कक्षाओं को प्रोत्साहन दिया करते थे।

फिर साठ और सत्तर के दशक में भारी बदलाव आया। तकनीकी प्रगति सफलता का मंत्र बन गई जिसकी अपनी ही एक परिभाषा है और इसके परिणामस्वरूप कला को दरकिनार कर दिया गया।

मानविकी को "कला विषयों" के नाम से पुकारा जाने लगा और उन्हें तुच्छ समझा जाने लगा। यहीं से शुरुआत हुई एक ऐसे जीवन में प्रवेश करने की जहाँ कला की उपेक्षा की जाती थी। इसके कारण विद्यार्थियों को बहुत भावनात्मक क्षति पहुँची क्योंकि उनके पास चित्रकारी, पेन्टिंग, बुनाई, गायन, नृत्य जैसे उत्साहवर्धक विषयों के अनुशीलन का समय ही नहीं होता था। इन्हें रुचि या हॉबी की श्रेणी में रखकर इनका दर्जा कम कर दिया गया जिनका अनुशीलन समय की उपलब्धि पर निर्भर करता था कि समय मिला तो करो अन्यथा नहीं। ज्यादातर परिस्थितियों में समय नहीं ही मिलता था।

अगरचे इस अदूरदर्शी नीति के दुष्प्रभाव लगातार सामने आ रहे हैं। इस अंक का सामूहिक सन्देश है–हमारे बच्चों के जीवन में कला उतनी ही जरूरी है जितना कोई और विषय।

जहाँ तक कला और बच्चे की बात है तो इसके पर्याप्त वैज्ञानिक प्रमाण मौजूद हैं कि कला से बच्चे की अपने आसपास की दुनिया की समझ सशक्त होती है, अपने अनुभवों को सुनियोजित करने में मदद मिलती है और इससे बच्चे के व्यक्तित्व की रचना होती है। विशेष जरूरत वाले बच्चे कला के लिए बहुत ही परिपक्व और अनपेक्षित रूप से प्रतिक्रिया दिखाते हैं। जो बच्चे स्कूल के बाहर कला के किसी भी रूप की कक्षाओं में जाते हैं, उन्हें अपने जीवन में कला के द्वारा जो अतिरिक्त आयाम मिलता है, उसकी वजह से वे अपने को बेहतर रूप से समायोजित कर पाते हैं।

तो उठाइए यह अंक और आनन्द लीजिए–और मैं जाकर अपना पेन्टब्रश बाहर निकालती हूँ!

प्रेमा रघुनाथ
सम्पादक, लर्निंग कर्व
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

कहाँ क्या है...

Pencil

खण्ड अ
व्यापक परिदृश्य

कला, राजनीति, बोध — 5
कौस्तुव रॉय

पाठ्यचर्या के केन्द्र में कला — 11
तारा किनी

खुशी-खुशी सीखना — 14
रति बासु

स्कूली शिक्षा में कला — 18
प्रशान्त सील

जब कला कलाकर बन जाती है... — 19
श्रीवि कल्याण

बच्चों के विकास में कलाओं की भूमिका — 25
दीपशिखा खैतान

मेरा परिप्रेक्ष्य — 29
एन. आर. प्रदीप

रोजमर्रा जीवन में सौन्दर्यानुभूति — 30
तरित भट्टाचार्जी

भारत के 'चोटी' के स्कूलों में शिक्षा कला — 34
वैजयन्ती शंकर, अर्चना द्विवेदी

स्कूल में दृश्यकला शिक्षण — 40
राधिका नीलकान्तन

खण्ड ब
चन्द परिप्रेक्ष्य

कलाओं की परिवर्तनकारी ताकत — 42
संजना कपूर

देखना सीखना, इन्द्रियों को जगाना — 46
जिनान

बड़े विभाजन को पाटते हुए — 52
विजय पडकी

एक शिक्षक सोचता है... — 55
सुरक्षा रावत

स्कूली शिक्षा में कठपुतली का उपयोग — 56
डॉ0 मिरेला फ़ोर्स्बर्ग अहल्क्रोना

शिक्षा में परम्परागत मंच-कलाएँ — 61
वी. आर. देविका

थियेटर और विज्ञान — 65
नीलांजन पी. चौधरी

मेरा मत — 69
अनिशा वर्गीज

शिक्षा में थियेटर — 70
लक्ष्मी कृष्णमूर्ति

अति सरलीकरण के दौर में एक काँपता स्वर — 75
वी. प्रसाद

Paint

शब्दों से परे
चाँदिनी हरलल्का 79

नाटक बहुत कुछ सिखाते हैं
कल्पना बालाजी 82

शिक्षा का एक रूपः फिल्म निर्माणकला
अंकित पोगुला 87

मुझे उठने दो...
नीरजा राघवन 91

खण्ड स
जो अनुभव किया

और फिर हमने नृत्य किया
चित्रा चन्द्रशेखर दासरथी 93

संगीतः एक आजीविका के रूप में
शारिक हसन 96

स्वतंत्र लक्ष्यहीन चित्रकारी से पूर्णकला की ओर
पायल हीरानन्दानी 100

कला शिक्षा, कला शिक्षक एवं कारीगर
नीरजा राघवन 102

एक यात्रा का सुगमीकरण
नटेल उल्लाल 108

बच्चों का स्वयं का स्थान
उमाशंकर पेरिओडी 113

रचनात्मक कार्यशालाएँ
रुद्रेश 116

मंच पर सीखना
अभिषेक गोस्वामी 120

मिट्टी के संग खेलना
सुमन्त सम्पत 122

अपने बच्चे के सपने को जीना
वाणी ब्रह्मचारी 125

शिक्षा में कला
गगन बग्गा 127

यक्षगान : सम्मोहक एवं मुक्तिदायक
इनी पेरिओडी 129

सोचने की कार्यशाला
करिश्मा अजमेरा, राहुल अजमेरा 132

नुक्कड़ थियेटर :
शिक्षित करने वाली एक कला
उत्तरा भरत कुमार 135

शिक्षामित्र में कला के साथ विकास
सुदेषणा सिन्हा 138